उस पथ पर तुम
मातृ भूमि हित शीश चढ़ाने,
जिस पथ जाये फिर अनेक।"

[२] कलगी बाजरे की

(1) हरी बिछली घास
दोलती कलगी छरहरी बाजरे की।
अगर मैं तुमको
लजाती साँझ के नभ की अकेली तारिका अब नहीं कहता,
या शरद के भोर की नीहार-न्हायी कुई,
टटकी कली चम्पे की
वगैरह, तो,
नही कारण कि मेरा हृदय उथला या कि सूना है,
या कि मेरा प्यार मैला।
बल्कि केवल यही:
ये उपमान मैले हो गये
देवता इन प्रतीकों के कर गये हैं कूच
कभी बासन अधिक घिसने से मुलम्मा छूट जाता है।
मगर क्या तुम
नहीं पहचान पाओगी:
तुम्हारे रूप के–
तुमहो, निकट हो, इसी जादू के-
निजी किस सहज, गहरे बोध से, किस प्यार से मैं कह रहा हूँ-
अगर मैं यह कहूँ–
बिछली घास हो तुम
लहलहाती हवा में कलगी छरहरी बाजरे की।

शब्दार्थ—**बिछली**—बिछी हुई। **दोलती**--डोलती हुई। **छरहरी**—लंबी-पतली। **लजाती**—लालिमायुक्त। **भोर**—सुबह। **नीहार**—कुहरा। **कुई**—कुमुदिनी। **टटकी**—सद्यः प्रस्फुटित, ताजाखिली। **बासन**—बर्तन। **मुलम्मा**—चमक, पॉलिश। **कूच**—लौट गये।

सन्दर्भ—प्रस्तुत काव्य अंश हमारी पाठ्य पुस्तक आधुनिक काव्य में संकलित कविता **'कलगी बाजरे की'** से उद्धृत है। इसके रचयिता प्रसिद्ध प्रयोगवादी कवि श्री **अज्ञेय** जी हैं। यह कविता उनके काव्य-संग्रह **'हरी घास पर क्षणभर'** में संकलित है।

प्रसंग—हिन्दी साहित्य में कवियों ने अपनी प्रेयसियों को अनेक नामों-उपनामों से सम्बोधित किया है। इनमें से अधिकांश उपमान पारम्परिक है। अज्ञेय जी अपनी प्रेयसी के रूप-सौन्दर्य अभिव्यक्ति के लिए इन पारम्परिक उपमानों के बजाय कुछ हटकर संबोधन देना चाहते हैं। प्रेम का स्वरूप तो वही है, केवल उपमान नवीन है।

व्याख्या—पारम्परिक उपमानों से हटकर कविवर अज्ञेय अपनी प्रेयसी के लिए 'हरी बिछली घास' तथा **'बाजरे की छरहरी कलगी'** उपमानों का प्रयोग अधिक आत्मीय ढंग से करते हैं। साथ ही वह यह भी स्पष्ट करते हैं कि यदि मैंने अपनी प्रियतमा को पारम्पारिक रूप से लालिमा युक्त सन्ध्या के आकाश की नयी नवेली तारिका अथवा शरदकालीन प्रातः काल में ओस से नहाई हुई कुमुदिनी अथवा चंपे की खिली कली आदि नहीं कहा तो इसका अर्थ यह नहीं है कि उनके हृदय से प्रेम की भावना ही समाप्त हो गयी है अथवा प्रेम में कोई विकार उत्पन्न हो गया है। वस्तुतः इन प्रतीकों को प्रयोग करने का असली कारण यह है कि तुम्हें अर्थात प्रेमिका के रूप-स्वरूप को अभिव्यक्ति करने के सारे प्रतीक पुराने और अर्थहीन हो गये हैं। उनकी चमक-दमक उसी प्रकार समाप्त हो चुकी है, जिस प्रकार बर्तनों को अधिक घिसने से उनकी पॉलिश समाप्त हो जाती है। तात्पर्य यही है कि समय-परिवर्तन के साथ-साथ पुराने प्रतीकों द्वारा भावभिव्यक्ति की शक्ति भी क्षीण होती जाती हैं उनमें पहले जैसी तीव्रता, तीक्ष्णता और पैनापन भी नहीं रह पाता।

कवि अपनी प्रेयसी से प्रश्न करता है कि क्या तुम मेरे इन नवीन प्रयोगों के अर्थ समझ पाओगी? वास्तव में, पुराने प्रतीक तुम्हारे पल-पल परिवर्तित रूप की छटा को रूपायित करने में नितांत अक्षम और असमर्थ हो गये थे। तुम्हारे होने को, तुम्हारे सामीप्य को, तुम्हारे जादू भरे आकर्षण को नितांत अपना अनुभव करते हुए मैं सहज भाव से, अपनत्व और हृदय की गहराई से और अत्यधिक प्यार से यह कहना चाहता हूँ कि तुम पृथ्वी पर जमी हुई कोमल, स्वस्थ, प्रसन्नतादायक हरी-भरी घास हो तथा इकहरी, सतर्क और प्रसन्नता से झूमती हुई बाजरे की कलगी हो।

काव्य-सौन्दर्य—**(1)** यहाँ कवि ने सही कहा है कि एक प्रतीक को बार-बार प्रयोग करने से वह न केवल पुराना हो जाता है वरन् उसकी अर्थवत्ता समाप्त हो नीरसता का समावेश हो जाता है।

(2) अज्ञेय द्वारा प्रयोग किये गये प्रतीक नितान्त नवीन और अर्थवत्ता से भरपूर हैं

(3) कवि की मान्यता है कि यथार्थ जीवन से उठाये गये प्रतीक हमारी संवेदनाओं के सच्चे संवाहक होते हैं।

(4) कविता चाहे किसी भी शैली में क्यों न रची गई हो, अपने युग और युग-मानव की अन्तश्चेतना से सीधे रूप में जुड़ी होती है।

(5) भाषा—व्यवहारिक खड़ी बोली। **(6) गुण**—प्रसाद, माधुर्य। **(7) शब्द शक्ति**—लक्षणा। **(8) शैली**—प्रतीकात्मक। **(9) रस**—शृंगार। **(10) छन्द**—मुक्त। **(11) अलंकार**—मानवीकरण।

(2) आज हम शहरातियों को पालतू मालंच पर संवरी जुही के फूल से
सृष्टि के विस्तार का-ऐश्वर्य का
औदार्य का-
कहीं सच्चा, कहीं प्यारा
एक प्रतीक बिछली है,
या शरद की सांझ के सूने गगन की पीठिका पर
दोलती कलगी अकेली
बाजरे की।
और सचमुच, इन्हें जब-जब देखता हूँ
यह खुला वीरान संसृति का घना हो सिमट आता है-
और मैं एकान्त होता हूँ
समर्पित
शब्द जादू हैं-
मगर क्या यह समर्पण कुछ नहीं है?

शब्दार्थ—शहरातियों—नगरवासियों। मालंच—पुष्पवाटिका। पालतू—घरेलू। संसृति—जगत्। घना—सघन,

सन्दर्भ एवं प्रसंग—पूर्ववत्।

व्याख्या—प्रस्तुत पंक्तियों में कविवर अज्ञेय कहते हैं कि हम नगरवासी है। हमारे पास समय का पर्याप्त अभाव है। हमारे पास इतना समय नहीं कि वनों-उपवनों में घूमते फिरे और नये-नये उपमानों के लिए नये पुष्पों की तलाश करें। अतएव हमें तो 'जूही के फूल' जैसे पुराने उपमान ही उचित लगते हैं, जो हमारी घरेलू पुष्पवाटिका की शोभा बढ़ा रही है। कवि कहता है कि "लेकिन मुझे तो सृष्टि के विस्तार उसके ऐश्वर्य और उदारता की प्रतीक बिछली घास सच्ची और प्यारी लगती है। शरदकालीन आकाश की पृष्ठभूमि में, सांध्य वेला में डोलती बाजरे की कलगी भी बिछली घास की तरह ही प्यारी, सच्ची और उदार प्रतीत होती है।"

अंत में कवि कहता है कि प्रकृति के प्रांगण में दूर-दूर तक बिछी हरी-भरी घास और लहलहाती बाजरे की कलगी को जब भी मैं देखता हूँ तो प्रकृति का सम्पूर्ण वैभव सघन होकर मेरी दृष्टि में समा जाता है और मैं सम्पूर्ण हृदयता के साथ उसके अपूर्व सौन्दर्य के प्रति समर्पित हो जाता हूँ कवि स्वयं से प्रश्न करता है कि क्या यह शब्दों का आकर्षण है या कुछ और? लेकिन क्या मेरा समर्पण कुछ भी नही हैं?

काव्य सौन्दर्य–(1) यहाँ शहर में रहने वाले व्यक्तियों की भागम-भाग तथा प्रकृति के प्रति उनकी उपेक्षा स्पष्ट दिखाई देती है।

(2) यहाँ कवि की अन्तश्चेतना प्रकृति के उन्मुक्त रूप के प्रति सहज भाव से समर्पित है।

(3) 'बिछली घास' नारी की सहज मृदुलता एवं मृसणता की सहज ऐन्द्रिय अभिव्यंजना है।

(4) 'बाजरे की छहरी कलगी' में नारी तन का लचीलापन एवं उसका तन्वीपन साकार दृष्टिगत है।

(5) यहाँ कवि का उद्देश्य यह बताना भी है कि प्रेम में शब्द या सम्बोधन इतना महत्वपूर्ण नहीं है, जितनी कि भावना। भाव-सम्प्रेषणीयता अपना मार्ग स्वयं खोज लेती है।

(6) **भाषा**—सहज प्रवाहमय सरल शब्दों से युक्त। (7) **शैली**—प्रतीकात्मक। (8) **गुण**—प्रसाद एवं माधुर्य। (9) **शब्द शक्ति**—लक्षणा। (10) **रस**—शृंगार। (11) **अलंकार**—अनुप्रास, पुनरुक्तिप्रकाश, मानवीकरण।

[३] साम्राज्ञी का नैवेद्यदान